श्री बालकृष्ण ग्रंथमाळा. ग्रंथांक ४-५.

॥ ॐ ॥

श्रीस्तवनमालिका.



प्रयोजक.—पूज्यपाद श्री बालकृष्ण शर्मा

श्री बाल ब्रह्मचर्याश्रम, डाकोर.

गूजरात विद्यापीठ ग्रंथालय

[गुजराती कॉपीराईट विभाग]

अनुक्रमांक ૧૨૮૪૭ वर्गांक

पुस्तकनुं नाम સ્તવનમાલિકા

विषय ૫૨:૪૫૭

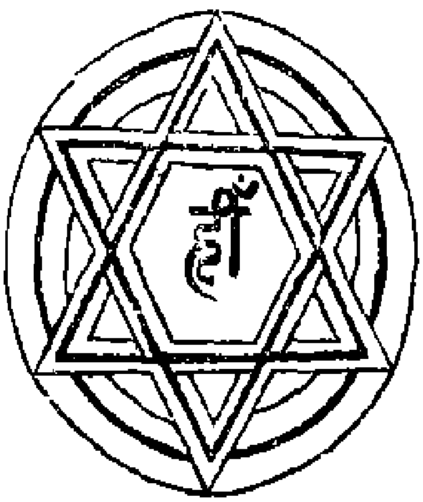
॥ ॐ ॥

॥ श्रीसद्गुरवे परमात्मने नमः ॥

श्रीस्तवनमालिका.

प्रयोजक—पूज्यपाद श्री बालकृष्ण शर्मा

संस्थापक तथा संचालक.—श्री बाल ब्रह्मचर्याश्रम, डाकोर.



प्रकाशकः—"श्री भक्तमंडळ"

संवत् १९८२ द्वितियावृत्ति प्रत १०००

अधिकारी जनोने मळवानु ठेः—

'श्री बाल ब्रह्मचर्याश्रम' स्टेशन रोड, डाकोर.

ગુજરાત વિદ્યાપીઠ ગ્રંથાલય
અમદાવાદ
ગુજરાતી કૉપીરાઈટ-સંગ્રહ
૧૨૮૪૭

मुद्रकः—रतीलाल बाळकृष्ण त्रिवेदी.

मुद्रणस्थान—सरस्वती प्री. प्रेस भटवाडी पोळ,
उमरेठ.

प्रकाशकः—श्री भक्तमंडळ तरफथी
रमणनाथ दिनानाथ शास्त्री,
श्री बालब्रह्मचर्याश्रम, डाकोर.

उपदेशामृत

, 'तमे परहित करवा लागशो तेम तेम तमे तमारा स्वार्थने, देहभावने भूलता जशो; देहनुं भान भूलतांज साची वस्तु (परमात्मा) प्राप्त थशे.

प्रभुनिन्दा, गुरुनिन्दा, पतिनिन्दा अने परनिन्दा करवी नहि तेम साभळवी पण नहि.

सत्य सदा मधुर होतुं नथी पण ते हमेशा टकी रहे छे माटे सत्यनुंज सेवन करवुं.

मन वाणी ने विचारमा असाधारण शुद्धि प्राप्त कर्या सिवाय कदापि पवित्र ब्रह्मचर्यव्रत पाळी शकाय नहि. ब्रह्म सत्य छे अने जगत् मिथ्या छे जीव ब्रह्मज छे ते विचार हृदयगत करवो.

संतोषथी रही तृष्णानी मर्यादा टूंकी करी नाखवी.

साचुं सुख अंतरमा छे ते बहार शोधवाथी नहि मळे.

नीतिना नियमोने मान्य आप्या सिवाय शुद्ध धर्म पाळी शकाय नहि.

मनने इष्टदेवमा जोडवुं तेनु नाम उपासना छे.

दाननी किम्मत हृदयना हेतुथी ठराववी नहि पण तेना

परिणामना विचारथी ठराववो.

परार्थे कर्मो करवा ते कर्मबंधन टाळवानो सुंदर उपाय छे.

दरेक प्रकारना दुःखो मनुष्यने इश्वर तरफ वाळवाज आवे छे..

परमात्माने प्रसन्न राखवाथी समस्त विश्व पोतानुं थइ जाय छे.

धर्म एटले आत्माने परमात्मामा जोडी देनार वस्तु.

सेंकडो अने लाखो पथोनुं ऐक्य वेदान्तमा रहेलुं छे.

स्त्रीओए पाठ करीने पतिपूजा करवी. पति एज स्त्रीनो प्रभु छे. पतिपूजाथी परमात्मा प्रसन्न थाय छे, पतिनी आज्ञानुसार वर्तन ए पतिपूजानो पहेलो पाठ छे. सर्व घटमा प्रभुने जोवा.

पारकाने पीडा करवी ते महान पाप छे. परोपकार करवो तेज खरुं पुण्य छे.

विपरित उपाधि अने परिस्थितिमाथी अनेक महान पुरुष थया छे.

आपणे जे जन्म लीधो छे तेनो हेतु इन्द्रिय लोलुपता पूरी करी पशुकोटीमा जवानो नथी.

निष्काम कर्म करवु एवी बुद्धि थवी ने ते निश्चय थवी ते ब्रह्मज्ञानने माटे उत्तम उपाय छे.

-: भाविक भक्तमंडळ माटे योजना :-

आ ग्रंथमाळाना लेखक के जेमना नाम उपरथी ग्रंथ-माळा प्रगट थाय छे ते पूज्य महात्माश्रीना प्रेमी घणा भक्तोनी अत्याग्रह भरी मागणीने मान आपी आ धार्मिक ग्रंथमां तेओश्रीनी प्रेममूर्ति पण प्रकाश करवामां आवी छे जेमनां दर्शन करीने सर्व श्रद्धालु जनोने संतोष थयाविना रहेशे नहि.

केटलाक बंधुओ धर्मपुस्तकोनी किमत पूछावे छे अने केटलाक अपरिचित सज्जनो पुस्तकने विना मूल्ये लेवानुं अघटित समजे छे. तेवाओने पुस्तक लेवानो संकोच न थाय तथा महात्माश्रीना लेखोनो लाभ सर्वे सनातनी धर्मचुस्त प्रजाने वखतो वखत मळतो रहे; वळी तेओश्रीनो हेतु "धार्मिक ग्रंथो वेचावा न जोइए पण वहेंचावा जोइए" ते पण सिद्ध थइ शके ते माटे अमोए हालमां ग्रंथमाळा खातु स्वतंत्र कर्युं छे. तेथी हवे जे भक्तोनी इच्छा धर्मग्रंथोने विना मूल्ये लेवानी

न होय तेओ तथा ग्रंथमाळा उत्तेजक उत्साहीओ, ग्रंथमाळा खाते यथेच्छ भेट मोकली आपशो तो ते ग्रंथमाळा प्रकाश माटे साभार स्विकारवामां आवशे अने तेनो उपयोग अमारा तरफथी ग्रंथमाळा छपावी प्रसिद्ध करवामाज थशे.

ग्रथमाळा निमित्त भेट आपनार भक्तोने रीतसर पहोच आपवामा आवशे.

लि. शास्त्री रमणनाथ दिनानाथ,

व्यवस्थापक:—

"श्री बालकृष्ण ग्रथमाळा"

डाकोर.

शुद्धि पत्रक

पृष्ठांक	पंक्त्यांक	अशुद्ध	शुद्ध
४	२	द्वद्वातीतं	द्वंद्वातीतं
१०	१६	श्रां	श्री
१३	६	भहालक्ष्मि!	महालक्ष्मि !
१५	४	जेवा	जेवी
१५	४	जेना	जेनी
१५	६	एवा	एवी
१५	८	भज्जन	मज्जन
१८	१	भयनां	भयानां
१९	५	मोक्षंनी	मोक्षनी

૨૨	७	भदं	भद्रं
३३	४	भनने	मनने
३४	११	देहाभिमानीओ	देहाभिबानीओ
३४	१३	देहाभिमानीओनी	देहाभिमानीओनी
३७	११	ज्ञानाद्ध्यान	ज्ञानाद्ध्यानं
३९	१४	द्वेष्टि	द्वेष्टि
४०	८	भक्तिमान्मे	भक्तिमान्मे
४०	१४	संताष	संतोष
४४	४	रुढ	रूढ
४४	६	जकतां	शकतां
४४	१५	प्रवृतिः	प्रवृत्तिः
४५	१५	तद्धांम	तद्धाम
४७	८	खेचे छे.	खेंचे छे.
४९	१२	श्रीकृष्ण	श्रीकृष्णे
५०	७	चद्र	चद्रं



॥ ॐ तत्सत् ॥

॥ धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ॥

परिचय.

आपणी भारतभूमि ए विश्वनियंताथी योजायली कर्मभूमि अने प्रभुनी पुनित सृष्टिनो आदर्श छे. तेना अनेक कारणो छे. तेमा सौथी महत्वनुं कारण तो ए छे के सर्व धर्मोना सृष्टा अहिंयां (भारतमां) ज उत्पन्न थया छे; अने तेमनी द्वाराए दुनियांना तमाम भागने ऐहिक सुख तथा आमुष्मिक श्रेयना साधनार्थे, कर्म, उपासना अने भक्तिज्ञानना खरा घुंटडा मळेला

छे. तेवा कल्याणदाता घुंटडा आधुनिक प्रजाने आ "श्री स्तवनमालिका" थी प्राप्त थाओ !!!

अने:—

आ संसारचक्रमा चालता प्राणीओनी भोजननी रुची, भिन्न भिन्न प्रकारनी छे. जेवी जेनी रुची, तेवुं ते ग्रहण करी शके छे. तेम संत, महात्मा अने भक्तजनोनी प्रभु प्राप्ति माटेनी रुचि—रीत, भिन्न भिन्न छे. ते परमात्मा तो एकज. जे सर्वाधार, सर्वशक्तिमान, सर्व साक्षी अने सर्वेश्वर छे; तेने जेओ जे रीते उपासे छे तेवा रुपे ते तेओने प्राप्त थाय छे. तेम आ "श्री स्तवनमालिका" भिन्न भिन्न प्रकारे भजवाथी सर्वने समरसे उपास्य थाओ !!!

तो:—

आ श्रीस्तवनमालिकानो परिचय आपवो आवश्यक नथी. तेनुं नामज ए तेनो देखीतो परिचय छे. तेमा परब्रह्मनां जूदा जूदा नामोना स्तवनो स्तुतिओ छे. तेमा कोई पण हिंदुधर्म या संप्रदायने बाधक थई पडे एवी स्तुति, हेतु पुरःसर नथी.

पण एथी उल्टुं सर्व धर्मने कंइने कंइ ईष्ट होय एवी योजना छे. एटले आ धर्मग्रंथ सर्वग्राही मुक्तिदाता गणाय.

अमारा प्रभु प्रेरणाथी स्थपाएला 'आश्रम' मा तो आ ग्रंथने प्रभु तुल्य पूजवामा आवे छे एटले के तेनो नित्यपाठ थाय छे. **प्रातःस्मरणादि** हमेशा प्रातःकाळमां थाय छे अने ए सिवायना स्तवनो दररोजना नियत करेला वखत प्रमाणे हमेशा थया करे छे. आवा कर्मथी अपूर्व आनंद प्राप्त थाय छे. ते तो अनुभवीओज जाणी शके छे. तेथी आ परमात्माना सत्य तत्वनो आनंद सर्व कोई जिज्ञासुओ एक सरखी रीते लई शके अने ते अखंडानंदनो अनुभव आ धर्मग्रंथ द्वारा वाङ्मय तपथी करी शके एवा हेतुथी आ चोथो अंक तैयार करवामा आव्यो छे.

अने:—

कपडवणज निवासी परमश्रद्धाळु वैष्णव रा. केशवलाल छगनलाल देशाईए, लोकोपयोगार्थे आ ग्रंथने पोताने खर्चे छपावी अमारा आश्रममां अर्पण कर्यो छे. तेओ पण आ

"श्रीस्तवनमालिकानो" हमेशा पाठ करे छे अने प्रभुने रीझववा आ पवित्र ग्रंथ प्रकट करवामा तेओ धर्म रक्षण जोइ रह्या छे तोः—

प्रिय पाठक ! आवा सज्जनोनुं, आपणे परमात्मा पासे आरोग्य दीर्घजीवन याचीशुं. स्वधर्मनुं रक्षण थवाथी ते रक्षायलो धर्म, पोतानुं ने प्रजानुं रक्षण करे छे अने स्वधर्म हणावाथी ते हणायलो धर्म पोतानो अने प्रजानो एटले देशनो नाश करे छे, ए अबाधित नियम छे. माटे आपणा पूर्वजो प्राचिन ऋषिमुनिओथी लइ अत्यारना थना अने थयेला सज्जन साधु, संन्यासी अने पवित्र ब्राह्मणोए पोत पोतानी प्रवृत्ति लोककल्याणमा धर्म रक्षणार्थे करी छे अने कर्या करवाना. तेम तुं पण आ सद्ग्रंथनो हमेशा पाठ करी स्वकल्याण करी, अन्यनु ए कल्याण कर. पूज्य परमहंस चतुर्थाश्रमी संन्यासीओए नित्य पाठ करवानो छे ते शांतिपाठ तथा गुरोरभिवंदन, आ "श्री स्तवनमालिका" मा छे तेथी तेओने पण आ ग्रंथ उपयोगनो छे

आ परब्रह्मना—प्रभुना जाप जपावी मुक्ति मार्गे लई जनार पवित्र ग्रंथ छे तेथी तेने कोइए नीचे जमीन उपर न मूकवो. पण तेना उपर बाधण बाधी जीवनी माफक जतन करवुं अने खूब ध्यान पूर्वक वाची वीचारवो एटले तेमांथी नीकळता परमात्माना तत्वो तमारु अवश्य जतन करशे. ए रीते आ ग्रथनो परिचय करी परमात्म स्वरूपने पामो !!! तथास्तु ॥

प्रभु सर्वनुं कल्याण करो !

बालकृष्ण शर्मा,

"श्री बाल ब्रह्मचर्याश्रम"

डाकोर.

|| ॐ तत्सत् ||

द्वितीयावृत्तिनो परिचय.

गुजरात काठीयावाडमा गत त्रण वर्षोमा धर्मोपदेश माटे विचरनार हाल छ मास थया ब्रह्मलीन थयेला हरद्वारना प. प. स्वामी श्री वामदेवाश्रमजी महाराज, जेओ एक समर्थ विद्वान, वेदान्तशास्त्रना अभ्यासी महात्मा हता. तेओ पोताना सत्संगी जनोने आ धर्मग्रंथनो उपदेश करी नित्यपाठ करवाने संकल्प करावता हता. ज्या ज्या तेओश्री विचरता त्या त्यानी भाविक प्रजानी 'श्रीस्तवनमालिका तथा त्रिकाल संध्या' नी आग्रह-भरी मागणीना असंख्य पत्रो 'आश्रम' मा आवेला छे. ते तेओना उपदेशनी थएली अजब असर अने आ धर्मग्रंथ प्रत्येनो अपूर्व प्रेम प्रदर्शीत करे छे. आ ग्रंथने तेओ पोतानो धर्मग्रंथ छे एम प्रवृत्ति करतां कहेता हता. आ तेओनी प्रेमभरी धर्मप्रवृत्तिना स्मरण तरीके आ आवृत्तिमा तेओश्रीनी प्रतिकृति (छबी) प्रगट करवामां आवी छे. अमो इच्छीए छीए के तेओनो जीवात्मा

जे परमात्मामा विलय पाम्यो छे, ते आत्मानुं बळ तेओना सर्वे सत्संगी जनोमा प्रेराओ ! अने तेओ जेम जनहितार्थे कर्मो करता हता तेवा अने तेने पण तेओनी बनावे तेवा कर्मो सर्वे शिष्य वर्गनी वृत्तिओमा उत्पन्न थाओ ! अने तेओश्रीना संकल्प प्रमाणे आ धर्मग्रंथनो नित्य पाठ करी, तेना निदिध्यासनथी, सर्वे नित्य सुख प्राप्त करो !! अस्तु ॥

जीज्ञासुओना हितार्थे आ आवृत्तिमा भक्तियोग तथा पुरुषोत्तमयोग ' नो वधारो करवामा आव्यो छे.

धर्मज अंग्रेजी स्कूलना अध्यापक स्वधर्मप्रेमी शुकलजी मणिशंकर विष्णुशंकरे आ 'ग्रंथमाळा' मा प्रकट थता पुस्तकोनां प्रुफो तपासी सुधारवानुं कार्य करवा इच्छा दर्शावेली होवाथी आ आवृत्तिना प्रुफो तेमणेज तपासीने सुधारो कर्यो छे ते माटे प्रभु तेमने आरोग्य पूर्ण दीर्घजीवन आपो. तथास्तु ॥ आ धर्मग्रंथनी प्रथमावृत्ति कपडवणजना रा. देशाइ केशवलाल भाइए छपावीने अर्पण करी हती. ते थइ रहेवाथी अने मागणीओनो उपरा उपरी वधारो थतो होवाथी रेल्वेना एक उत्साही भक्तने प्रभुए आ ग्रंथ छपावी पुनः प्रसिद्ध करवानी प्रेरणा करी. तेमणे पोताना स्नेही मित्रोने ए बाबत जणावी

तेथी तेमना तथा तेमना मित्रोना प्रभुप्रेरित सुप्रयासथी डाकोर तथा आणंद अने गोधरा वच्चे आवना रेल्वे स्टेशनोना मास्तरो तथा स्टाफ अने स्नेहीजनो 'श्री भक्तमंडळ' तरफथी आ आवृत्ति छपाइने प्रसिद्ध थवा पामी छे. हवे आत्मिक बळने प्रकटाववा माटे मनुष्य देहज छे. आ धर्मग्रंथ छपावीने प्रसिद्ध करनार भक्त मंडळे तथा दरेक विवेकी मनुष्ये ते ध्यानमा राखवुं घटे छे के पोतानामा आत्मिकबळ प्रकटाववा, त्रिविध तापने मूळ सहित उच्छेद करवा अने स्वभाविक परमानंदनो नित्य आविर्भाव प्राप्त करवा माटेज आ 'श्रीस्तवनमालिका' नो ध्यान पूर्वक नित्यपाठ करवो अवश्यनो छे.

आध्यात्मिक विद्यामा अद्वैतविद्या जेम सर्वज्ञानमां संमिलन रुप छे तेम आ 'श्रीस्तवनमालिका' संसार सागरमां डूबका खाता प्रत्येक जीवोनी भेदरूप भ्रातिने काढवा, सर्वने अभेदभावथी परमात्मानुं संमिलन प्राप्त करवा योग्य प्रतीत थाओ ! ! ! तथास्तु ॥

प्रभु सर्वने सन्मति आपो !

चैत्र शुकल एकादशी — **बालकृष्ण शर्मा**

संवत १९८२ — "श्री बाल ब्रह्मचर्याश्रम" **डाकोर**



જ્ઞાનોદય પ્રેસ-ભરૂચ.

॥ ॐ तत्सत् ॥

श्री सद्‌गुरवे परमात्मने नमः ॥

श्री स्तवनमालिका.

॥ प्रातःस्मरणम् ॥

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वम् ।
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ॥
यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यम् ।
तद् ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः ॥१॥

भावार्थः—हुं प्रातःकाळमां हृदयमां स्वयं प्रकाशरुप स्फुरायमान आत्मतत्त्वने स्मरुं छुं; जे सत्,

चित् अने आनंद स्वरुप छे, जे परमहंसोनी गति, तुरीयस्वरुप, जागृत, स्वप्न अने सुषुप्तिना द्रष्टा, उत्पात्ति नाशरहित अने जे निरवयव सर्वव्यापक परमात्मा छे ते ब्रह्म हुं छुं. पंचभूतोना समुदायरुप पिंजर ते हुं नथी. अर्थात् देह ते हुं नथी. ए प्रकारे स्मरण करुं छुं. १

प्रातर्भजामि मनसो वचसामगम्यम् ।
वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण ॥
यन्नेति नेति वचनैर्निगमा अवोचु-
स्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥२॥

भावार्थः–मन अने वाणीथी जे अगम्य छे अने सर्ववाणी जेना अनुग्रहवडे प्रकाशमान थाय छे. जेने निगम-वेदो 'नेति नेति' अर्थात् 'न इति, न इति' एवो ते नथी, एवो ते नथी. एम कही कथन करे छे, ते देवना देव अनादि, नाश रहित, आत्मतत्त्वने हुं प्रातःकाळमां भजुं छुं. ॥ २ ॥

प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णम् ।
पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ॥
यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्त्तौ ।
रज्ज्वां भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै ॥३॥

भावार्थः—अंधकारथी पर, परम प्रकाशस्वरुप, सर्वत्रपूर्ण, नित्यनिरंतर रहेवावाळा, जेमां आ समग्र संसार विवर्तरुपे रज्जु (दोरडी)मां सर्पनी पेठे भासमान थइ रह्यो छे एवा, ते सर्वोत्तम आत्मतत्त्वनुं हुं प्रातःकाळमां ध्यान धरुं छुं. ३

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥४॥

भावार्थः—हे समुद्ररूपि वस्त्रवाळी भूदेवि, हे पर्वतरुपी स्तनमंडळवाळी, हे विष्णुपत्नि, हे देवी ! मारा पादस्पर्शने क्षमा करो. ४

॥ ॐ ॥

ब्रह्मानंदं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं ।
द्वंद्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ॥
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं ।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥५॥

भावार्थः—ब्रह्मानंदरूप, परम सुख आपनार, केवळ, ज्ञानमूर्तिरुप, सुख दुःखादि द्वंदथी अतीत (वेगळुं), आकाशवत् व्यापक (सर्वाधार) निर्मळ, तत्वमस्यादि महावाक्य वडे ओळखाय एवुं, एक नित्य, निर्मळ, अचळ, सर्वबुद्धिना साक्षीभूत, भावथी अतीत, त्रणे गुणथी रहित एवा ब्रह्मरुप सद्गुरू परमात्माने हुं नमस्कार करूं छुं. ५

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥६॥

भावार्थः—गुरु एज ब्रह्मा छे, गुरु एज विष्णु अने गुरु एज महेश्वर—महादेव छे अने गुरू एज

परब्रह्म स्वरूप छे. एवा श्री सद्‌गुरू परमात्माने हुं नमस्कार करुं छुं.

अज्ञानतिमिरांधस्य ज्ञानांजनशलाकया ।
चक्षुरुन्मिलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥७॥

भावार्थः—अज्ञानरुपी अंधकारमां आंधळा, थई गयेलाने ज्ञानरुपी अंजननी-सळी वडे जेणे चक्षु खोली आप्यां छे एवा सद्‌गुरु देवने मारा नमस्कार छे. ७

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥८॥

भावार्थः—अखंड मंडलरुप आकारवाळुं सचराचर जेनाथी व्याप्त छे एवुं "तत्" पद जेणे ओळखाव्युं छे एवा सद्‌गुरु देवने मारा प्रणाम. ८

वक्रतुण्ड महाकाय सूर्यकोटिसमप्रभ ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥९॥

भावार्थः—वक्र मुखवाळा, म्होटा शरीरवाळा, करोडो सूर्यना सरखी कान्तिवाळा हे, गणेश ! सर्वदा सर्वकार्योमां सिद्धिदाता देव ! म्हारा कार्यने, निर्विघ्नताए परिपूर्ण करो ! ! ! ९

यतोऽनंतशक्तेरनंताश्च जीवा।
यतो निर्गुणादप्रमेया गुणास्ते ॥
यतो भाति सर्वं त्रिधाभेदभिन्नम् ।
सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥१०॥

भावार्थः—जे त्हारी अनंत शक्ति वडे, अनंत प्राणीओ प्रकाशित थाय छे, जे त्हारा निर्गुणथी अनेक गुण उत्पन्न थाय छे; तथा जे त्हाराथी ए सर्व त्रिविध भेदने प्राप्त थईने प्रकाशित थाय छे. तेवा-गणेशने नित्य निरंतर अमे प्रणाम पूर्वक सेवीए छीए. १०

यतो वेदवाचो विकुंठा मनोभिः ।
सदा नेति नेतीति यत्ता गृणंति ॥

परब्रह्मरूपं चिदानंदभूतम् ।
सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥११॥

भावार्थः–जे त्हारा सामर्थ्यने वेदनी वाणी 'नेति नेति' कहीने स्वीकार करे छे. जे त्हारा रुपने मन पण ग्रहण करी शकतुं नथी. ते परब्रह्मरूप सत् चित्, आनंदनो आधार गणपति तने अमे प्रणाम पूर्वक सदा सेविए छीए. ११

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं ।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ॥
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं ।
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥१२॥

भावार्थः–शान्त–त्रिगुणथी रहित छे आकार जेनो, शेष [नाग] छे शय्या जेनी, नाभि (डूंटी) मां छे कमळ जेना, देवोना छे ईश जे, विश्वना छे धारण कर्त्ता जे, निराकार छे आकार जेनो, मेघ जेवुं छे स्वरूप जेनुं, खुबसुरत छे अंग जेनुं, लक्ष्मीना छे

पति जे, नीलकमल जेवां छे नेत्र जेनां, योगीजनोज ध्यानथी जाणी शके छे जेने, संसारना दुःखोना नाश करनार तथा सर्व लोकोना एकज स्वामी छे जे, एवा श्री विष्णु भगवानने हुं वंदन-प्रणाम करूं छुं. १२

श्रीनृसिंहं महाबाहुं महांतं दीप्ततेजसम् ।
चिदानंदमयं नित्यं प्रणवं ज्योतिरूपिणम् ॥१३॥

भावार्थः—जे नित्य, सत्, चित्, आनंदमय छे. जे प्रणवगम्य, ज्योति स्वरूप, दिव्य प्रकाशथी प्रकाशित, ने म्होटी भूजाओवाळा छे. एवा श्री नृसिंह भगवानने हुं प्रणाम करूं छुं. १३

शरीरं वैकुंठं हृदयनलिनं वाससदनं ।
मनोवृत्तिस्तार्क्ष्यो मतिरियमथो सागरसुता ॥
विहारस्तेऽवस्थात्रितयमसवः पार्षदगणो ।
न पश्यत्यज्ञत्वादिह बहिरहो याति जनता ॥१४॥

भवार्थः—हे नाथ ! आ शरीर वैकुंठ छे. तेमां हृदयकमळ आपनुं निवास स्थान छे. मननी वृत्ति

ते गरूड छे. अमारी बुद्धि ते लक्ष्मी छे. जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति आपने विहार करवानी भूमि छे. अने प्राण आपना पार्षद (गण) छे. परंतु आपने एवा न जाणवाथी लोको अहिंतहिं भटकता फरे छे ए केटलुं आश्चर्य छे. ? १४

आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः
प्राणाः शरीरं गृहं ।
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा
समाधिस्थितिः ॥
संचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः
स्तोत्राणि सर्वा गिरो ।
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं
शंभो तवाराधनम् ॥१५॥

भावार्थः—हे प्रभो ! आप आत्मा छो, श्री महामाया पार्वती बुद्धि छे, प्राणो ए आपना गण छे,

शरीर ए घर छे, विषयोनो विलास ए आपनी पूजा छे. विराम—शयनकरवुं—उंघवुं एज समाधि छे आम तेम रूडी रीते फरवुं एज आपनी प्रदक्षिणा छे. संपूर्ण बोलचाल ए आपनी स्तुति छे. हे कैलास-निवासिन् ! हे दयामय ! हुं जे जे कर्म करुं छुं, करीश अने करी चूक्यो छुं ते सर्व आपने प्रसन्न करवा माटेनां हो. एज अमारी सदोदित याचना छे. १५

करचरणकृतं वा कक्कायजं कर्मजं वा ।
श्रवणनयनजं वा मानसं वापराधम् ॥
विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व ।
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥१६॥

भावार्थः—हे नाथ ! अमारा हाथोथी, पगोथी, शरीरथी, कर्मथी, कानोथी, नेत्रोथी, मनथी, जाणे के अजाणे, योग्यायोग्य जे कंई अपराध थया छे ते सर्वने आप क्षमा करो. हे करूणाना समुद्र ! हे देवाधिदेव ! हे श्रीशंभो ! आपनो जय थाओ ! जय थाओ ! जय थाओ !!! १६

यन्मंडलं दीप्तिकरं विशालं
रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम् ॥
दारिद्र्यदुःखक्षयकारणं च
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१७॥

भावार्थः—जेनुं मंडल महान् प्रकाशक अने रत्नोनी समान झगझगित कान्तिवाळुं, अनादि तथा दारिद्र ने दुःखोनो नाश करवावाळुं छे एवा ते स्वीकार करवा योग्य श्री सूर्यनारायण मने पवित्र करो।१७

यन्मंडलं देवगणैः सुपूजितं
विप्रैः स्तुतं भावनमुक्तिकोविदम् ॥
तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१८॥

भावार्थः—जेनुं मंडळ देवगणोथी पूजाएलुं, ब्राह्मणोए स्तुति करेलुं, तथा श्रद्धाळुने मुक्ति आपवावाळुं छे. ते देवना देव श्री सूर्यने हुं प्रणाम करूं छुं. ते श्रेष्ठ सूर्यदेव मने पवित्र करो. १८

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कंधस्थितां भीषणाम् ।
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ॥
हस्तैश्चक्रदरालिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीम् ।
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥१९॥

भावार्थः-विद्युतवाली (विजळीना लीसोटा) जेवी चमकदार कान्ति छे जेनी, सिंहनी खांध उपर स्वारी करी छे जेणे, धर्मथी विमुख दुष्टोने मारवा माटे उग्र छे स्वरुप जेनुं, हाथमां चक्र, खप्पर, दंड अने बाणने धारण कर्यां छे जेणे, तथा टंकार करता धनुष्यने धारण करी रही छे जे, अग्नि जेवी दिव्य, मस्तक उपर चंद्रमा छे जेना तथा त्रण नेत्र छे जेने अने उत्तम पदार्थोथी शोभित छे हाथ जेना, एवी कन्याओथी सेवायेल छे जे, एवी जगत जननी दुर्गानुं अमे सेवन करीए छीए. १९

नमोस्तु देव्यै भृगुनन्दनायै ।
नगोस्त त्रिपुरारुरसि स्थितायै ॥

नमोस्तु लक्ष्म्यै कमलालयायै ।

नमोस्तु दामोदरवल्लभायै ॥२०॥

भावार्थः–हे भृगुरूपिनी पुत्री ! देवी ! तने नमस्कार छे. हे विष्णुना वक्षस्थळ (छाती) उपर निवास करनारी भगवति ! तने नमस्कार छे. हे कमळ मध्ये निवास करवावाळी महालक्ष्मि ! तने नमस्कार छे. हे कृष्णप्रिये तने नमस्कार छे. २०

आवाहनं यजनवर्णनमग्निहोत्रं ।

कर्मार्पणं तव विसर्जनमत्र देवि ॥

मोहान्मया कृतमिदं सकलापराधं ।

मातः क्षमस्व वरदे बहिरन्तरस्थे ॥२१॥

भावार्थः–हे अंब ! में अज्ञान वश थईने जे त्हारां आवाहन, यजन, वर्णन, अग्निहोत्र, कर्मार्पण तथा विसर्जनादि कार्यरूपी, अपराध कर्या छे ते हे जननी ! हे सर्वैश्वर्यने आपवावाळी माता, ते अप-

राधने क्षमा करो, केमके तुं सर्वव्यापक तथा अनंत सामर्थ्य युक्त छे. २१

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता ।
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ॥
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता ।
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेष जाड्यापहा ॥२२॥

भावार्थः—जे कुन्द पुष्प तथा बरफ अने हार जेवी सफेद कान्तिवाळी छे. जेणे सफेद वस्त्र धारण कर्यां छे. जेना हाथ वीणा, वरदान तथा दंडथी शोभित छे. सफेद कमळ आसन छे जेनुं; ब्रह्मा, विष्णु अने शंकरादिक देवताओ जेनुं वंदन करे छे. जे अज्ञाननो नाश करे छे ते शारदा, सरस्वती भगवती म्हारी रक्षा करो. २२

शशिशुद्धसुधाहिमधामयुतं ।
शरदम्बरबिम्बसमानकरम् ॥

बहुरत्नमनोहरकान्तियुतं ।
तव नौमि सरस्वतीपादयुगम् ॥२३॥

भावार्थः—पूर्णिमाना चंद्रमा, अमृत अने बरफ जेवी कान्ति छे जेना, शरद ऋतुना वादळ जेवा हाथ छे जेना, अने असंख्य दिव्य रत्नोथी दिप्त छे तेज जेनुं, एवा हे सरस्वती ! त्हारा बंने चरणोने हुं प्रणाम करुं छुं. २३

भवसागरमज्जनभीतिनुतं ।
प्रतिपादितसंततिकारमिदम् ॥
विमलाधिकशुद्धविशुद्धपदं ।
तव नौमि सरस्वतीपादयुगम् ॥२४॥

भावार्थः—हे संसार समुद्रमां डूबेला दुःखी मनुष्योना दुःखोनो नाश करवावाळी ! हे उत्तम ज्ञाननी वृद्धि करवावाळी ! हे अत्यंत विमल-शुद्ध-तर चरण कमळोवाळी सरस्वती ! त्हारा सर्वाभिष्ट-प्रद चरणकमळोने हुं प्रणाम करुं छुं. २४

शारदा शारदाम्भोजवदना वदनाम्बुजे।
सर्वदा सर्वदास्माकं सन्निधिं सन्निधिं क्रियात् ॥२५॥

भावार्थः—हे प्रफुल्लित शरद ऋतुना कमळ सरखा मुखवाळी, हे सर्वाभिष्टने आपवावाळी, हे भगवती शारदम्ब ! कृपा करीने तमे नित्य अमारा ज्ञाननी वृद्धि करो ! ! ! २५

तत्त्वं न जानंति परमात्मनस्ते ।
जनाः समस्तास्तव माययातः ॥
त्वद्भक्तसेवामलमानसानां ।
विभाति तत्त्वं परमेकमैशम् ॥२६॥

भावार्थः—हे प्रभो ! आपनी मायामां फसेल पुरुष, आपना परम तत्त्वने नथी जाणता. किंतु हे नाथ ! आपना भक्तोनी सेवा करवाथी पवित्र थयां छे अंतःकरण जेनां, एवा मनुष्योनेज आपनुं परम ऐश्वर्य संबंधी स्वरुप जाणवामां आवे छे (तथा कृपा करीने आप अमने आपना परम भक्तोनी सेवानुं फळ आपो.) २६

नमस्ते सते ते जगत्कारणाय ।
नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय ॥
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय ।
नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥२७॥

भावार्थः—हे सत्‌रूप, जगतना कारण, ज्ञान-स्वरुप, सर्वलोकना आश्रय, अद्वितीय, मुक्तिदाता, नित्य तथा सर्व व्यापी परब्रह्म! तमने नमस्कार छे. २७

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं ।
त्वमेकं जगत्पालकं स्वप्रकाशम् ॥
त्वमेकं जगत्कर्तृ पातृ प्रहर्तृ ।
त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥२८॥

भावार्थः—तमे एकज सर्वना रक्षक, जगतना पालक, स्वप्रकाश, जगकर्ता पालनकर्ता, संहर्ता, श्रेष्ठ अने निश्चळ तथा निर्विकल्प छो. २८

भयनां भयं भीषणं भीषणानां।
गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम् ॥
महोच्चैःपदानां नियन्तृ त्वमेकं।
परेषां परं रक्षणं रक्षणानाम् ॥२९॥

भावार्थः—वळी तमे एकज भयना भय, भयंकरोमां भयंकर, प्राणीओनी गति, पवित्रना पवित्र, उंचामां उंचा स्थानना नियंता, श्रेष्ठमां श्रेष्ठ तथा रक्षणना पण रक्षण छो. २९

वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो।
वयं त्वां जगत्साक्षिरूपं नमामः ॥
सदेकं निधानं निरालंबमीशं।
भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः ॥३०॥

भावार्थः—आ संसारना साक्षिरुप तमने अमे स्मरीए छीए-भजीए छीए तथा नमीए छीए. सत्य स्वरुप, विश्रान्ति स्थान, निरालंब, भवसागर तरवानी नौका, एवा तमे एक ईश्वरने अमे शरण छीए. ३०

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम् ॥३१॥

भावार्थः–हे सर्वान्तरयामी जगदीश्वर! हुं राज्यनी इच्छा नथी करतो, स्वर्गनी इच्छा मने नथी अने मोक्षनी इच्छा पण मने नथीज. किंतु दुःखथी पीडित मनुष्योना दुःखोनो नाश जेनाथी थाय ए उपाय हुं मागु छुं. कृपा करीने आप मने दुःखी मनुष्योनां दुःख हठाववानी शक्ति आपशो. ३१

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां।
न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः ॥
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं।
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ॥३२॥

भावार्थः–प्रजानुं कल्याण हो! राजाओ न्याय पूर्वक पृथ्वीनुं राज्य चलावो. नित्य गोब्राह्मणोनी वृद्धि थाओ अने संपूर्ण संसार सुखी थाओ!!! ३२

॥ ॐ तत्सत्परमात्मने नमः ॥

॥ उपनिषद्–शांतिपाठः ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ १ ॥

शब्दार्थः–ते (उपाधि रहित ब्रह्म) पूर्ण छे. आ (उपाधि सहित ब्रह्म पण) पूर्ण छे. (कारणके) पूर्णथी पूर्ण वृद्धि पामे छे. पूर्णना पूर्णने लेतां पण पूर्ण अवशेष रहे छे. (उपाधि रहित ब्रह्ममांथी उपाधि सहित ब्रह्मने लई लेवामां आवे तो उपाधि रहित शुद्ध ब्रह्मज रहे छे.) ॐ शांतिः शांतिः शांतिः एटले हे परमात्मन्! अमने आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक शांति आपो. १

ॐ आप्यायंतु ममाङ्गानि वाक्प्राणश्चक्षुः श्रोत्रमथो बलमिन्द्रियाणि च सर्वाणि सर्वं ब्रह्मौपनिषदं माहं ब्रह्म निराकुर्यां मा मा ब्रह्म निराकरोदनिराकरणमस्त्वनिराकरणं मेऽस्तु । तदात्मनि निरते य उपनिषत्सु धर्मास्ते मयि सन्तु ते मयि सन्तु ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ २ ॥

शब्दार्थः—म्हारा अंगो वृद्धि पामो. वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, अंतःकरण तथा सर्व इन्द्रियो वृद्धि पामो. हुं सर्व वेदनो तथा उपनिषद्रुप ब्रह्मनो त्याग न करुं. ब्रह्म म्हारो त्याग न करो. अमारी परस्पर प्रीति थाओ. अमारी परस्पर प्रीति थाओ. उपनिषद्‌मां जे शमादि धर्मो रहेला छे. ते धर्मो म्हारामां हो ! म्हारामां हो !

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ २

ॐ सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै । तेजस्वि नावधीतमस्तु । मा विद्विषावहै ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ३ ॥

शब्दार्थः—ते परमेश्वर खचीत अमारुं (गुरु शिष्यनुं) पालन-रक्षण करो. ते फळने प्रकाश करी अमारुं रक्षण करो. खरेखर अमोने ब्रह्मविद्याने माटे सामर्थ्य आपो. अमे जे कांई अध्ययन कर्युं होय ते प्रकाशयुक्त थाओ. अमोने परस्पर द्वेष न थाओ.

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ३

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः । भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँसस्तनूभिः व्यशेम देवहितं यदायुः ॥ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः । स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ४ ॥

शब्दार्थः—हे प्रभो ! अमे श्रोत्र वडे (वेदान्तथी उत्पन्न थयेला) कल्याण कारक वचनोने सांभळीए. यजत्र-अर्थात् उपदेष्टाना स्वरुपने अथवा परमात्माना स्वरूपने नेत्रोवडे जोइए. स्थिर अर्थात् विषयवृत्तिथी शून्य एवा अवयवो वडे अमे ब्रह्मात्मक श्रुतिवचनथी

आपनी स्तुति करीए. हे देव! आपनी कृपाथी रोगथी रहित एवा दीर्घायुषने अमे पामीए. महान् कीर्तिवाळो इन्द्र अमोने ब्रह्मानंद आपे. सर्वज्ञ एवा सूर्यदेव अमारुं कल्याण करो. अकुंठित गतिवाळा गरुड अमारुं कल्याण करो. तेमज बृहस्पति अमारुं कल्याण करो. ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ४

॥ ॐ शं नो मित्रः शं वरुणः । शं नो भवत्वर्यमा । शं न इन्द्रो बृहस्पतिः । शं नो विष्णुरुरुक्रमः । नमो ब्रह्मणे । नमस्ते वायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि । ऋतं वदिष्यामि । सत्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु । तद्वक्तारमवतु । अवतु माम् । अवतु वक्तारम् ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ५ ॥

शब्दार्थः—मित्र अमारुं सुख करनार थाओ. वरुण अमारूं सारुं करो. अर्यमा (सूर्य) अमारूं सारुं करो. इन्द्र तथा बृहस्पति अमारूं सारूं करो. उरुक्रम विष्णु अमारूं सारूं करो. ब्रह्मने नमस्कार छे. हे

वायुदेव ! आपने नमस्कार छे. आप प्रत्यक्ष ब्रह्मदेव-रुप छो. आपने प्रत्यक्ष ब्रह्मदेवरुप कहीश. हुं आपने प्राणवायुरुप कहीश. हुं आपने सत्यरूप कहीश. समष्टिरुप ब्रह्मदेव, व्यष्टिरुप म्हारुं पालन करो. वक्तानुं (आचार्यनुं) पालन करो. ब्रह्मदेव म्हारुं रक्षण करो. वक्तानुं ब्रह्मदेव रक्षण करो. ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ५

ॐ वाङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि। वेदस्य म आणीस्थः श्रुतं मे मा प्रहासीरनेनाधीतेनाऽहोरात्रान्संदधामि । ऋतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु । तद्वक्तारमवतु। अवतु माम् । अवतु वक्तारमवतु वक्तारम् ॥

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ६ ॥

शब्दार्थः—वाणी म्हारा मनमां स्थित थाओ, म्हारुं मन वाणीमां स्थिति पामो. हे आत्मन्! म्हारे माटे प्रकट थाओ. हे वाणी तथा मन! म्हारे माटे वेद लाववा समर्थ थाओ. म्हारुं गुरू मुखथी श्रवण

करेलुं म्हारो परित्याग न करो. हुं दिवस तथा रातने आ अध्ययन वडे जोडुं छुं. हुं शास्त्रथी निश्चय करायेल बुद्धि वडे कहीश. हुं सत्य अर्थात् शास्त्रना निश्चयवाळी बुद्धि वडे कहीश. ते म्हारुं रक्षण करो. ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ६

ॐ यश्छन्दसामृषभो विश्वरूपः छन्दोभ्योऽध्यमृतात्संबभूव ॥ स मेन्द्रो मेधया स्पृणोतु ॥ अमृतस्य देव धारणो भूयासम् ॥ शरीरं मे विचर्षणम् ॥ जिह्वा मे मधुमत्तमा ॥ कर्णाभ्यां भूरि विश्रुवम् ॥ ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधया पिहितः ॥ श्रुतं मे गोपाय ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ७ ॥

शब्दार्थः—जे विश्वरुप सर्वेश्वर वेदोमां श्रेष्ठ छे; छन्दोमां ध्यानथी उत्पन्न थया छेः ते सर्वान्तरयामी इन्द्र मने पवित्र बुद्धिथी युक्त करो. यथार्थ ज्ञानने धारण करवावाळो हुं थाउं. म्हारुं शरीर पुष्ट थाओ. म्हारी वाणी मधुर बोलवावाळी बनो. कानोथी हुं पवित्र ज्ञाननुं श्रवण करुं. हे इन्द्र! तुं ब्रह्मज्ञानने

खजानो बुद्धिमां स्थित छे. जे वेदान्तादि उत्तम शास्त्रनुं हुं श्रवण करुं छुं, करीश अने करी चूक्यो छुं. ते सर्वनी तमे रक्षा करो!!! ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ७

ॐ अहं वृक्षस्य रेरिव ॥ कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव ॥ उर्ध्वपवित्रो वाजिनीवस्वमृतमस्मि ॥ द्रविणं सवर्चसम् ॥ सुमेधा अमृतोक्षितः ॥ इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम् ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ८ ॥

शब्दार्थः–हे नाथ हुं संसाररूपी वृक्षनो छेदक बनुं. जेवी रीते कैलास पर्वतनुं उच्च शिखर सर्व विश्वमां प्रसिद्ध छे तेवी रीते म्हारी कीर्ति सुप्रसिद्ध हो! हुं सर्वथी वधारे पवित्र अमृतरुप सूर्यनी माफक सर्वनो प्रकाशक बनुं. अमारां द्रव्यादि पदार्थो, ब्रह्म-वर्चस अने सद्बुद्धि सदा अमर रहो!!!

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ८

ॐ भद्रं नो अपिवातय मनः ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ९ ॥

शब्दार्थः—हे प्रभो! म्हारुं मन आपनी कृपाथी शुभ-पवित्र संकल्पवाळुं हो!!!

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ ९

ॐ यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै ॥ तं ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ १० ॥

शब्दार्थः—जेणे पहेलां ब्रह्माने उत्पन्न कर्या अने तेमने वेदोनुं ज्ञान आप्युं; ते प्रकाश स्वरुप, आत्माना प्रकाशक देवनी, हुं ज्ञाननो अभिलाषी शरणने प्राप्त थाउ छुं. ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥ १०



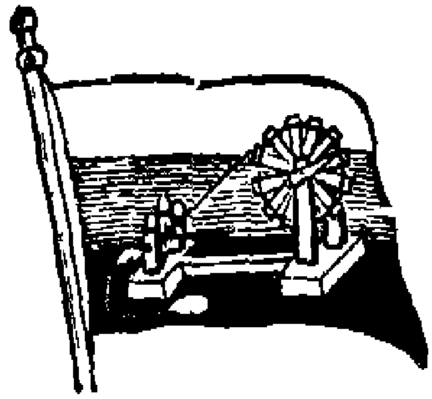
॥ ॐ श्री सद्गुरवे परमात्मने नमः ॥

॥ श्री गुरोरभिवंदनम् ॥

ॐ नमो ब्रह्मादिभ्यो ब्रह्मविद्यासंप्रदायकर्तृभ्यो वंश ऋषिभ्यो महद्भ्यो नमो गुरुभ्यः । सर्वोपप्लव-रहितः प्रज्ञानघनः प्रत्यगर्थो ब्रह्मैवाहमस्मि ॥१॥ ॐ हरं हरिं पद्मभवं वसिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्रपराशरं च । व्यासं शुकं गौडपदं महान्तं गोविन्दयोगीन्द्रमथास्य शिष्यम् ॥२॥ श्री शंकराचार्यमथास्यपद्मपादं च हस्तामलकं च शिष्यम्॥ तं त्रोटकं वार्तिककारमन्यानस्मद्गुरून्संततमान-तोऽस्मि ॥३॥ श्रुतिस्मृतिपुराणानामालयं करुणालयम् ॥ नमामि भगवत्पादं शंकरं लोकशंकरम् ॥४॥ शंकरं शंकराचार्यं केशवं बादरायणम् ॥ सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥५॥ ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेद-विभागिने॥ व्योमवद्व्याप्तदेहाय दक्षिणामूर्तये नमः ॥६॥

॥ अनध्यायमङ्गलपाठः ॥

अशुभानि निराचष्टे तनोति शुभसंततिम् ॥ स्मृतिमात्रेण यत्पुंसां ब्रह्म तन्मंगलंपरम् ॥१॥ अतिकल्याणरूपत्वान्नित्यकल्याणसंश्रयात् ॥ स्मर्तॄणां वरदत्वाच्च ब्रह्म तन्मङ्गलं विदुः ॥२॥ ॐकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा ॥ कण्ठं भित्त्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ ॥३॥ हरिः ॐ तत्सत् परब्रह्मार्पणमस्तु॥



॥ ॐ तत्सत् ॥

॥ अथ मन्त्रपुष्पांजलि ॥

॥ ॐ यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्न्यासन् ॥ तेहनाकंम्महिमानंः सचन्त यत्र पूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ॥ ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने । नमो वयं वै श्रवणाय कुर्महे । स मे कामान्कामकामाय मह्यं । कामेश्वरो वै श्रवणो ददातु । कुबेराय वैश्रवणाय । महाराजाय नमः ॥ ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं माहाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्सार्वभौमः सार्वायुषऽआन्तादापरार्धात् ॥ पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो

मरुत्तस्यावसन्गृहे । आविक्षितस्य काममेविश्वे देवाः सभासद इति ॥ ॐ विश्वतश्चक्षुरुतविश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देवऽएकः ॥ नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ॥ पुष्पाञ्जलिं मया दत्तां गृहाण परमेश्वर ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्री अमुकपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः। मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ॥ प्रार्थना ॥ विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय। नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ॥



॥ ॐ तत्सत् ॥

"भक्तियोग"

(गीता अ. १२)

अर्जुनउवाच ॥ अर्जुन बोल्या:—

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते ।

ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥१॥

भावार्थ—अर्जुन पूछे छेः—सर्व कर्मो तमने अर्पण करवाथी निरंतर तमारे विषे एकनिष्ठावाळा जे भक्तो विश्वरुप, सर्वज्ञ अने सर्वशक्तिवाळा एक तमने उपासे छे अने जेओ अविनाशी तथा अव्यक्त एवा सर्वश्रेष्ठ परब्रह्मनुं ध्यान करे छे ते बेमां उत्तम योगी कोण छे ? १

श्री भगवानुवाच ॥ श्री भगवान् बोल्याः—

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥२॥

भावार्थ—श्री भगवान कहे छेः—हुं के जे सर्वज्ञत्व आदि गुणवाळो छुं; तेने विषे मनने एकाग्र करीने नित्य मारे माटे कर्मादि करीने एक मारा उपर निष्ठावाळा तथा परम श्रद्धा राखनारा, एवा जेओ मारुं आराधन करे छे; तेओने हुं उत्तम योगी मानुं छुं. २.

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ।
सर्वत्रगमचिंत्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥३॥
संनियम्येंद्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ।
ते प्राप्नुवंति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥४॥

तथापि शब्दादिथी जेनुं नाम उच्चारी शकाय नहि एवा रूपादिथी रहित, सर्वत्र व्यापक, अव्यक्त-पणाथी अचिंत्य, मायाना कार्यरूप, संसारमां अधि-ष्ठाता रूपे रहेला, अचल तथा नित्य एवा अविनाशी परब्रह्मने जेओ जितेंद्रिय थइ सर्वत्र समदृष्टि करी

सर्व प्राणीओना हितमां परायण थया थका मने भजे छे, तेओ पण मनेज पामे छे. ३. ४.

ज्यारे तेओ पण तमनेज पामे छे. त्यारे तमे बीजाओने उत्तम योगी केम मानो छो? ते शंकाना उत्तरमां त्रण श्लोको वडे श्रीकृष्ण कहे छेः—

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥५॥

तेओ मने पामे छे, ए वात खरी छे, परंतु अव्यक्त कहेतां निर्विशेष एवा परब्रह्म उपर जेनुं मन आसक्त थाय छे एवा ते योगीओने अधिक क्लेश थाय छे; कारण के, देहाभिमानीओ घणा कष्ट-थी अव्यक्त एवा परब्रह्म विषे नित्य स्थिति मेळवी शके छे, तात्पर्य के, देहाभिमानीओनी आत्मस्वरुपमां स्थिति रहेवी ए कठिन छे. ५.

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायंत उपासते ॥६॥
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ।

भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥७॥

मारा भक्तो तो मारी कृपाथी भ्रम विनाश सिद्धिने पामे छे, ते वात बे श्लोकवडे कहे छेः—

परंतु जेओ मने परमेश्वरने सर्वे कर्मो अर्पण करीने अने मारा परायण थइने मारुं ध्यान धरे छे तथा अनन्य एवा भक्तियोगवडे मारी उपासना करे छे, ते मारे विषे मनने जोडनारा भक्तोना हे पृथाना पुत्र ! हुं मरण धर्मवाळा संसारमांथी थोडा समयमां ज उद्धार करुं छुं. ६. ७.

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।

निवसिष्यसि मय्येव अत उर्ध्वं न संशयः ॥ ८ ॥

मांट तुं संकल्प विकल्पात्मक मनने, मारे विषेज स्थिर कर तथा निश्चयात्मक एवी बुद्धिने पण मारे विषे परोव आम करवाथी मारी कृपाथी ज्ञान संपादन करीने, देह पडया पछी, मारे विषेज तुं निवास करीश अर्थात् मारा रूपेज तुं रहीश, ए निःसंदेह छे. ८

परमात्मा विषे मनने अने बुद्धिने स्थिर करवाने अशक्त एवा पुरुषोने माटे सुगम उपाय कहे छे:—

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम् ।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनंजय ॥९॥

हे अर्जुन ! तुं मारे विषे जो मनने स्थिर राखवा माटे अशक्तिमान् हो तो, विषयादिकथी चंचळ एवा मनने विषयोमांथी पाछुं वाळी, मारां स्मरणरूपी योगाभ्यासवडे मने प्राप्त करवा माटे प्रयत्न कर. ९

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव ।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि ॥१०॥

तुं जो अभ्यास करवा माटे पण असमर्थ हो, तो, मने प्रसन्न करनारां, एकादशीना उपवासादि व्रतो तथा मारां (हरिकीर्तनादि) कर्मो करवामां तत्पर रहे. मारे माटे पण एवां कर्मो करवाथी तुं मोक्ष पामीश. १०

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः ।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

जो आ प्रमाणे पण कर्मो करवाने तुं अशक्त हो तो एक मारुं शरण अंगीकार करीने मनने नियम-मां राख अने पछी दृष्ट फळवाळां आवश्यक कर्मोनां तथा अदृष्ट फळवाळां अग्निहोत्रादि कर्मोनां फळोनो त्याग कर. ११.

तात्पर्य-मारे तो ईश्वरनी आज्ञा प्रमाणे यथाशक्ति कर्मो करवांज जोइए. पछी तेनुं दृष्ट के अदृष्ट फळ थाय के न थाय, ए ईश्वराधीन छे. आम मारा उपर भार मूकीने फळनी इच्छाने दूर करीश तो कृतार्थ थइश.

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यान विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छांतिरनंतरम् ॥१२॥

शुष्क अभ्यास करतां युक्तिवाळा उपदेशथी मळेलुं ज्ञान श्रेष्ठ छे अने उपरचोटियां ज्ञान करतां ज्ञानपूर्वक ध्यान उत्तम छे, कारण के, श्रुति पण कहे छे के "तं पश्यति निष्कलं ध्यायमानः-ध्यान करनारो मनुष्य निराकार परब्रह्मने जुवे छे" अने ध्यान करतां पण कर्म फळनो त्याग श्रेष्ठ छे;

कारणके, कर्मफळना त्यागथी एटले कर्ममां अने तेना फळमां आसक्तिनो त्याग करवाथी तुरतज संसारनी निवृत्ति थाय छे. १२

आठ श्लोक वडे भगवान भक्तना गुणो गाय छेः-

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥ १३ ॥

संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः
मय्यर्पितमनोबुद्धियो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥ १४ ॥

सर्व प्राणीओ साथे द्वेष नहि करनारो, समान साथे मित्रताथी वर्तनारो, पोताथी हीननी साथे दयाथी वर्तनारो, अहंता ममता रहित, अहंकार विनानो; पारके दुःखे दुःखी अने पारके सुखे सुखी थनारो, क्षमावन्त, निरंतर लाभ तथा हानि थतां संतोष माननारो, सावध, मनने नियममां राखनारो दृढ निश्चयवाळो, मारे विषे मनने तथा बुद्धिने अर्पण करनारो एवो मारो भक्त मने प्रिय छे. १३-१४.

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रिय.॥ १५ ॥

लोको, जेनाथी भयनी शंका तथा खेद पामतां नथी, जे लोकोथी उद्वेग पामतो नथी, वळी जे मनुष्य स्वभाविक एवां हर्ष, इर्ष्या, भय अने उद्वेग आदिथी मुक्त छे, ते मारो भक्त मने प्रिय छे. १५

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारंभपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥ १६ ॥

जे दैवेच्छाथी मळेली वस्तु उपर पण इच्छा रहित छे, जे बाह्य तथा आंतर शौचथी पवित्र छे, आळस रहित छे, पक्षपात रहित छे, व्यथा रहित छे, इष्ट अने अदृष्ट फळवाळां सर्व कर्मोनो त्याग करनारो छे, ते मारो भक्त मने प्रिय छे. १६

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः॥ १७॥

जे प्रिय वस्तुना लाभथी हर्ष पामतो नथी, अप्रिय वस्तुना लाभथी खेद करतो नथी, प्रिय

वस्तुनो नाश थतां पण जे शोक करतो नथी, नहि मळेली वस्तु मेळववा माटे जे प्रयत्न के इच्छा करतो नथी अने पुण्य तथा पापनो त्याग करे छे, ते मारो भक्त मने प्रिय छे. १७

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः संगविवर्जितः ॥ १८ ॥
तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥१९॥

शत्रु अने मित्र साथे समान रीते वर्तनारो, मान तथा अपमान थतां पण हर्ष के शोक नहि करनारो, शीत, उष्ण अने सुख दुःखमां पण समान रीते वर्तनारो, कोइ पण वस्तु उपर आसक्ति रहित, निंदा अने स्तुतिने समान गणनारो, मौन रहेनारो, हरकोइ वस्तुथी संतोष माननारो, हरकोइ ठेकाणे पडी रहेनारो, दृढबुद्धिवाळो तथा मारा उपर भक्ति राखनारो जे पुरुष छे, ते मने प्रिय छे. १८, १९.

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥२०॥

श्रद्धावाळा अने मनेज परम पुरुषार्थ माननारा एवा जे महात्माओ, उपर कह्या प्रमाणे आ धर्मरूप अमृतने सेवे छे, ते भक्तो मने अत्यंत प्रिय छे. २०

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः

भक्तियोगः संपूर्णः

|| ॐ ||

'पुरुषोत्तमयोगः'

(गीता अ. १५)

|| श्री भगवानुवाच || श्री भगवान् बोल्याः—

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छंदांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥१॥

श्री भगवान कहे छे—हे अर्जुन ! जेनुं मूळ उंचुं छे [एटले क्षर (भूत) तथा अक्षर (जीव) करतां पुरुषोत्तम उत्तम छे] जेनी शाखा नीचे छे [एटले पुरुषोत्तम पछीनां कार्यो उपाधिवाळा हिरण्यगर्भ वगेरे जीवो छे.] जेनां पांदडां वेदो छे [एटले के धर्म, अधर्म प्रतिपादनद्वारा छाया तरीके गणाता कर्मनां फळोने माटे सर्व जीवो संसार वृक्षनो आश्रय करे छे माटे वेदोने पांदडां कह्यां छे.] काल सवार सुधी पण रहेशे नहि, आवा अविश्वासथी संसारवृक्षने अश्वत्थ कहे छे,

परंतु प्रवाहरुपी अविच्छिन्न छे, माटे तेने अव्यय पण कहे छे. आ संसाररुपी वृक्षने जे जाणे छे ते वेदने जाणे छे. १

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसंततानि कर्मानुबंधीनि मनुष्य लोके ॥२॥

सत्वगुणी, रजोगुणी तथा तमोगुणी गतिरुपी पाणीना सिंचनथी फालेली, शब्द, स्पर्श आदि विषयरुपी कुमळां पांदडांवाळी, संसाररुपी वृक्षनी शाखाओ अर्थात् कार्योपाधिवाळा हिरण्यगर्भ आदि जीवो, नीचे तथा उपर एटले पशु आदिनी नीच योनीमां तथा देवता आदिनी उंच योनिमां फेलायला छे अने आ मनुष्य लोकमां, ते संसार वृक्षनां कर्मोवडे बंधायली भोगवासनारुपी नानां नानां मूळो उपर तथा नीचे एटले उंच नीच योनिमां विस्तार पामेलां छे. २

भावार्थः—उपर अने नीचेना लोकमां जे जे भोग भोगव्या होय, ते ते भोगवासना प्रमाणे कर्मो क्षीण थया पछी जीव पाछो मनुष्य लोकमां अवतरे छे अने पूर्व वासना प्रमाणे कर्ममां प्रवृत्ति करे छे. कारणके

कर्म करवानो अधिकार आ मनुष्य लोकमांज छे, बीजा लोकमां नथी. माटे अहिं 'मनुष्य लोकमां' एम कह्युं छे.

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते नांतो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं सुविरुढमूलमसंगशस्त्रेण दृढेन छित्वा ॥३॥

आ संसारनां वासी प्राणीओ उपर वर्णवेलां आ संसारवृक्षनां स्वरुपने जाणी शकतां नथी, तेम ते छेडा वगरनुं होवाथी तेना पारने, अनादि होवाथी तेना आरंभने तथा ते केवी रीते उभुं छे, तेनी स्थितिने जाणी शकतां नथी. आ प्रमाणे होवाथी संसार वृक्षने जेम कापी शकातुं नथी, तेमज ते अनर्थ करनारुं पण छे. माटे दृढ एवा वैराग्यरुपी शस्त्रवडे जेनां मूळ अत्यंत बंधायलां छे, एवा संसार वृक्षने कापी नाखवुं जोइए. ३

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तंति भूयः ।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृतिः प्रसृता पुराणी ॥ ४ ॥

त्यार पछी संसारवृक्षना मूळभूत विष्णुपदने शोधवुं, के ज्यां आगळ गयेला फरीने संसारमां आवता नथी परमात्माने शोधनारा पुरुषे, जे परमात्माथी चिर

काळ वडे आ संसारनी प्रवृत्ति थइ छे, तेज आदि पुरुषने शरणे जाउं छुं, ए प्रमाणे एकांत भक्तिथी परम पदने शोधवुं. ४

निर्मानमोहा जितसंगदोषा
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वंद्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञै
र्गच्छंत्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ ५ ॥

जेओ मान तथा मोह रहित छे, जेओए पुत्रादिना संगनो दोष जित्यो छे, जेओ आत्मज्ञानमां निष्ठावाळा छे, जेओ विशेषे करीने कामना रहित छे, सुख दुःखनां कारण होवाथी सुख दुःखने नामे बोलता टाढ तडका वगेरे द्वंद्व रहित एवा माया रहित ज्ञानी पुरुषो, विष्णुना अविनाशी स्वरुपने पामे छे. ५

न तद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परमं मम ॥ ६ ॥

सूर्य, चंद्र तथा अग्नि जे पदने प्रकाश करी शकता नथी.

अने योगीओ पण जे पदने पामीने, फरी अवतरता नथी. ते मारुं धाम-स्वरूप छे. ६

तमारां स्वरूपने प्राप्त थयेला जीवो फरी संसारमां जन्मता न होय, तो तो "सति संपद्य न विदुः सति संपद्यामहे-परब्रह्मना स्वरूपने प्राप्त थईने जाणता नथी के अमे परब्रह्मने प्राप्त थया छीये" आ श्रुति प्रमाणे सुषुप्ति वेळा तथा प्रलय वेळा सर्वेने तमारी प्राप्ति थाय छे अने तेओ तमने जाणता नथी, माटे कोण संसारी रहेशे? आवी अर्जुनने शंका थइ ते उपरथी श्रीकृष्ण तेने पांच श्लोकवडे संसारी जीवनुं दर्शन करावे छे.

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥ ७ ॥

मारोज एक अंश, के जे अविद्याथी जीवरूप थयो छे, ते सर्वदा संसारमां संसारी रूपे प्रसिद्ध छे. आ जीव सुषुप्ति तथा प्रलय वेळाए प्रकृतिमां लय थयेलां मनने पांच ज्ञानेन्द्रियने पांच कर्मेन्द्रिय तथा प्राणने सांसारिक भोग भोगववा माटे आकर्षण करे छे. ७

ભાવાર્થઃ—સર્વે જીવ મારા અંશ છે, માટે સુષુપ્તિ તથા પ્રલય વેળાએ યાવજ્જીવ મારે વિષે લય થવાથી તેઓને મારી પ્રાપ્તિ થાય છે, એ વાત ખરી છે. તથાપિ અવિદ્યામાં વિંટાયલો અને વાસનાવાળો જીવ, મારાં પ્રકૃતિવાળાં સ્વરૂપમાં લય પામે છે, પરંતુ શુદ્ધ સ્વરૂપમાં લય પામતો નથી. માટે સંસારના ભોગ ભોગવવા સારૂ અવતરેલા અવિવેકી પુરુષ, પ્રકૃતિથી થયેલી ઉપાધિરુપ ઈન્દ્રિયોને પોતાના તરફ ખેંચે છે. પરંતુ જ્ઞાનિતો મારાં શુદ્ધ સ્વરૂપને પ્રાપ્ત થયા પછી ફરીને સંસારમાં જન્મતો જ નથી.

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गंधानिवाशयात् ॥ ८ ॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥ ९ ॥

દેહાદિકનો સ્વામી જીવ, કર્મને વશ હોવાથી જ્યારે પૂર્વનાં શરીરમાંથી નીકળે છે અને બીજા શરીરમાં પ્રવેશ કરે છે, ત્યારે, વાયુ જેમ પોતાના નિવાસભૂત પુષ્પાદિ-

मांथी सुगंधनां सूक्ष्म परमाणुओने लइने जाय छे, तेम जीव पण प्रथमना शरीरमांथी कान, त्वचा, नेत्र, जिह्वा अने नाशिका आदि बाह्येन्द्रियो तथा अंतःकरण, आटली वस्तुओनो आश्रय करीने शब्दादि विषयोने भोगवे छे. ८,९

आ रीते तो कार्य अने कारणना समुदायरूप देहथी जूदा एवा आत्माने सौ कोइ जाणता नथी, तेनुं कारण शुं ? तेना उत्तरमां श्रीकृष्ण कहे छेः—

उत्क्रामंतं स्थितं वापि भुंजानं वा गुणान्वितम् ।
विमूढा नानुपश्यंति पश्यंति ज्ञानचक्षुषः ॥ १० ॥

एक शरीरमांथी बीजा शरीरमां जनारा अथवा तो तेज शरीरमां रहीने विषयनो उपभोग करनारा अथवा तो तेज इंद्रियोनी साथे जोडायला जीवने अज्ञानी पुरुषो देखता नथी, परंतु ज्ञानदृष्टिवाळा-विवेकी पुरुषो जुवे छे. १०

आत्माने जाणवो, ए काम बहुज कठण छे. विवेकी-ओमां पण केटलाएकज आत्माने जाणे छे, ते वात कहे छे.

यतंतो योगिनश्चैनं पश्यंत्यात्मन्यवस्थितम् ।
यतंतोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यंत्यचेतसः ॥ ११ ॥

ध्यानादिथी आत्माने जाणवा माटे प्रयत्न करनारा योगीओमां केटलाएक योगीओ शरीरमां रहेला आत्माने शरीरथी भिन्न जाणे छे, परंतु शास्त्र अने अभ्यास आदिथी प्रयत्न करतां छतां पण मलिन मनवाळा अने मंद बुद्धिवाळा लोको तो आत्माने देखताज नथी. ११

"न तद्भासयते सूर्यः" इत्यादि वचनोवडे परमेश्वरनुं धाम कह्युं अने तेने प्राप्त थयेला फरीने अवतार धरता नथी आम पण कह्युं पटले अर्जुनने शंका थइ के त्यारे हवे तो कोइ पण संसारी रहेशे नहि. तेना उत्तरमां श्रीकृष्ण देहादिथी भिन्न परमात्मानुं स्वरुप दर्शाव्युं हवे ते ज परमेश्वरनां स्वरुपनुं अनंत शक्तिरुपे निरुपण करे छेः-

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।
यच्चंद्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥ १२ ॥

जे तेज सूर्यमां रहेलुं छे, जे तेज चंद्रमां रहेलुं

छे, जे तेज अग्निमां रहेलुं छे, ने जे तेज आखा ज-गतने प्रकाशित करे छे, ते तेज मारुं छे एम जाणवुं. १२

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥१३॥

हुंज बळवडे पृथ्वीमां रही स्थावर जंगम भूतोने धारण करुं छुं अने हुंज रसमय चन्द्र थइने यव आदि सर्व औषधिओने पोषुं छुं. १३

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥ १४ ॥

हुं वैश्वानर नामनो जठराग्नि थइने प्राणीओनां शरीरमां रहुं छुं अने जठराग्निने उद्दीपन करनारा प्राण तथा अपान वायु साथे रहीने प्राणीओथी खवातां, भक्ष्य, भोज्य, लेह्य तथा चोष्य एवां चार प्रकारना अन्नने पचावुं छुं. १४

भावार्थः—दांतथी भागीने खवाय ते भक्ष्य-रोटली वडां विगेरे; जांभथी हलावीने खवाय ते भोज्य-

दूधपाक वगेरे; जीभ उपर मूकी चगळी चगळीने स्वाद लेवाय ते लेह्य-साकर गोळ वगेरे; अने डाढोवडे चूसी चूसीने जेनुं पान करवामां आवे ते चोष्य-शेरडी वगेरे.

सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च ।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदांतकृद्वेदविदेव चाहम् ॥ १५ ॥

हुं सर्वना हृदयमां अंतर्यामी रुपे सारी रीते प्रवेश करीने रहुं छुं, माटे प्राणीमात्रने पूर्वे अनुभवेली बाबतोनी स्मृति, विषय तथा इंद्रियोना संबंधथी थयेलुं ज्ञान अने ते बंन्नेनो विनाश, आ सर्व माराथीज थाय छे. सर्वे वेदोवडे ते ते देवता रुपे हुं जाणवा योग्य छुं, वेदांत संप्रदायनो प्रवर्त्तक तथा तेनुं ज्ञान आपनारो पण हुंज छुं तथा वेदना अर्थने जाणनारो पण हुंज छुं. १५

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥ १६ ॥

जगतमां क्षर तथा अक्षर एवा बे पुरुषो प्रख्यात

छे तेमां ब्रह्माथी मांडीने स्थावर पर्यंत सर्व प्राणीओ क्षर पुरुष कहेवाय छे अने जे, शरीरोनो नाश थया छतां पण पर्वतनी पेठे निश्चळ रहे छे, ते कूटस्थ अक्षर भोक्ता कहेवाय छे. १६

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥

उपर कहेला क्षर तथा अक्षर पुरुष करतां बिलक्षण, श्रुतिओ जेने परमात्मा कहे छे, जे विकार रहित छे, जे सर्वनो नियंता छे, जे त्रण लोकमां प्रवेश करीने तेनी रक्षा करे छे, ते उत्तम पुरुष छे. १७

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥

हुं नित्य मुक्त होवाथी जड वर्गने ओळंगी गयो छुं अने सर्वनो नियंता होवाथी चेतन (जीव) वर्ग करतां पण हुं उत्तम छुं; माटे हुं लोकमां तथा वेदमां पुरुषोत्तमनां नामथी प्रख्यात छुं. श्रुति पण कहे छे के;

स वा अयमात्मा सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः ।
सर्वस्याधिपतिः सर्वमिदं प्रशास्ति ॥

ते आत्मा, सर्वने वश राखनार, सर्वनो स्वामी तथा सर्वनो अधिपति छे अने आ सर्व जगत् उपर राज्य करे छे. १८

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ॥१९॥

हे भरतवंशी अर्जुन ! उपर कह्या प्रमाणे जे पुरुष निश्चळ बुद्धि थइ, मारां पुरुषोत्तम रुपने जाणे छे, ते सर्व प्रकारे मनेज भजे छे, कारणके ते सर्वज्ञ होय छे. १९

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान् स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥२०॥

हे दोषरहित भरतवंशी अर्जुन ! आ छानामां छानुं शास्त्र में तने कह्युं. आ शास्त्र जाणीने हरकोइ

पण मनुष्य बुद्धिमान् तथा कृतार्थ थाय छे. त्यारे तुं तो कृतकृत्य हो, तेमां आश्चर्य शुं? २०.

ॐ तत्सादिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तमयोगोनाम पंचदशोध्यायः ॥१५॥

पुरुषोत्तमयोग संपूर्णः

वर्तमान ब्रह्मचर्याभास प्रकरण:—

'आश्रम' ना ब्रह्मचारीओए भजवेलो, आधुनिक लोकरूढिने दर्शावी सत्यज्ञान तरफ दोरतो एक रमुजी बोधप्रद संवाद छे. फक्त दोढ आनानी पोष्टनी टीकेटो मोकलवाथी बहार गामना जिज्ञासु जनोने बुक पोष्टथी मोकली आपवामां आवे छे.

श्री यजुर्वेदीय त्रिकाल संध्या:—

फक्त एक आनानी पोष्टनी टीकेटो मोकलवाथी बहारगामना जीज्ञासुजनोने ते बुकपोष्टथी मोकली आपवामा आवे छे. आ संध्यामां संध्या करवा माटेनो शास्त्रार्थ छे. आ ग्रंथ अमदावादना शेठ मफतलाल चुनीलाले छपावी ब्रह्मार्पण कर्यो छे.

श्री शुक्ल यजुर्वेदीय माध्यन्दिनी वाजसनेयी शाखाध्यायि ब्रह्मचारिणा:—

॥ सायं प्रातर्होमविधिः ॥

आ, द्विजना समावर्तन संस्कार थया वगरना ब्रह्मचारीओने खास अगत्यनो होवाथी (आ होमविधि) लखी तैयार करवा-

मां आव्यो छे तेने वाडासीनोर, श्री. वि, स्मा. पाठशाळाना अध्यापक शास्त्रीजी पुरुषोत्तम शर्माए पोताना स्व. पिताश्री पीताम्बरना स्मरणार्थे छपावी 'आश्रम'मा अर्पण कर्यो छे. बहार गामना जीज्ञासुओने अर्धा आनानी पोष्टनी टीकेटो मोकलवाथी ते बुकपोष्टथी मोकली आपवामां आवे छे.

श्री संध्यामहत्त्व:—

आ, डाकोर, साहित्योत्सव प्रसंगे आपवामां आवेल टूंक व्याख्यान छे तेने एक वैष्णवे छपावी आश्रममां अर्पण कर्युं छे. फक्त अर्धा आनानी पोष्टनी टीकेट मोकलवाथी मंगावनारने बुकपोष्टथी मोकली आपवामां आवे छे.

सरनामुं:—

व्यवस्थापक:—"**श्री बालकृष्ण ग्रंथमाळा**"

'श्री बाल ब्रह्मचर्य आश्रम', डाकोर.

डाकोर, "श्री बाल ब्रह्मचर्य आश्रममां" अन्य यासे मळी आवता संस्कारी जनोनु दान स्वीकाराय

॥ सर्वेभवन्तु सुखिन: ॐ शांति: शांति: शांति: ॥

नृदेहमाद्यंसुलभंसुदुर्लभंप्लवंसुकल्पंगुरुकर्णधारं ॥
मायानुकूलेननभस्वतेरितंपुमान्भवाब्धिंनतरेत्सआत्महा॥

श्री. भा० ए० स्कं० अ० १०–१७

अर्थः—सर्व सत्कर्मोना फळरुप आ मनुष्यदेहरुपी वहाण करोडो प्रयत्ने न मळे तेवुं छे, छता अनायासे इश्वर कृपाथी प्राप्त थयु छे, जेमा साधकरुपी वहाणवटी छे, ने ते वहाण भक्ति वडे मेळवेली भगवत्कृपारुप वायुथी प्रेरायलुं छे, तेम छता जे माणस संसार समुद्र तरतो नथी, ते पोते पोतानी मेळेज पोतानो घात करे छे अर्थात् अमर आत्माने जन्ममरण-रुपी संसारना प्रवाहमा नाखीने दुःखी थाय छे.